दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 20 दिसंबर, 2023

इस मामले में:

रि.या.(सि.) 4288/2012

भारत संघ और अन्य ..... याचीगण

द्वारा: श्री रुचिर मिश्रा, श्री संजीव कु. सक्सेना, श्री मुकेश कु. तिवारी, श्री रमनीक मिश्रा और सुश्री पूनम मिश्रा, भारत संघ के लिए अधिवक्तागण।

बनाम

सुभाष चंद्र अग्रवाल ..... प्रत्यर्थी

द्वारा: सुश्री सुरूर मंदर और सुश्री रिया यादव, अधिवक्ता।

कोरमः
माननीय न्यायमूर्ति श्री सुब्रमण्यम प्रसाद

निर्णय

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत यह वर्तमान रिट याचिका निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर की गई है:

"i. अपील सं. सी.आई.एस./एस.एस./ए/2011/001476 में विद्वान केंद्रीय सूचना आयोग द्वारा पारित दिनांक 05.12.2011 के

आक्षेपित आदेश को अभिखंडित करने के लिए उत्प्रेषण या किसी अन्य रिट, निर्देश या आदेश की प्रकृति में उचित रिट, निर्देश या आदेश पारित करें;

ii. ऐसे अन्य और आगे के निर्देश जो माननीय न्यायालय इस मामले के तथ्यों में उपयुक्त और उचित समझे।"

2. याचिकाकर्ता यहाँ दिनांक 05.12.2011 के आक्षेपित आदेश से व्यथित है जिसके अंतर्गत केंद्रीय सूचना आयोग (सी.आई.सी.) ने प्रत्यर्थी की अपील को अनुमति दी है और केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी (सी.पी.आई.ओ.), विधि कार्य विभाग, विधि और न्याय मंत्रालय को 2जी स्पेक्ट्रम के आवंटन से संबंधित दूरसंचार विवाद निपटारा एवं अपील अधिकरण (टीडीएसएट) और इस माननीय न्यायालय के समक्ष सेल्युलर ऑपरेटर्स एसोसिएशन ऑफ़ इंडिया द्वारा दायर विभिन्न मामलों के संबंध में भारत के तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा दूरसंचार विभाग, तत्कालीन संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय को दी गई 2007 की *टिप्पणी*/राय की प्रति प्रदान करने का निर्देश दिया है।

3. वर्तमान रिट याचिका दायर करने से जुड़े तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं:

i. प्रत्यर्थी ने यहाँ दिनांक 21.05.2010 को केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी, दूरसंचार विभाग, केंद्रीय संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय के समक्ष एक आर.टी.आई. आवेदन दायर किया, जिसमें 2जी बैंड/स्पेक्ट्रम के आवंटन के संबंध में माननीय केंद्रीय दूरसंचार मंत्री द्वारा तत्कालीन

माननीय प्रधान मंत्री को दिनांक 26.12.2007 को लिखे पत्र के संबंध में जानकारी और विवरण माँगे गए हैं।

ii. आर.टी.आई. आवेदन दिनांक 21.05.2010 को दिनांक 26.12.2007 के पत्र को संलग्न करते हुए दायर किया गया था और इसमें निम्नलिखित जानकारी माँगी गई थी:

> *"1. क्या दिनांक 26.12.2007 का संलग्न पत्र अधिप्रमाणित है*
>
> *2. क्या दिनांक 26.12.2007 के संलग्न पत्र में उल्लिखित पहलुओं पर केंद्रीय विदेश मंत्रालय और तत्कालीन महा सॉलिसिटर के साथ कोई चर्चा हुई थी?*
>
> *3. यदि हाँ, तो कृपया संलग्न पत्र दिनांक 26.12.2007 में संदर्भित पहलुओं पर तत्कालीन केंद्रीय विदेश मंत्री और तत्कालीन महा सॉलिसिटर के साथ बैठक के कार्यवृत्त की प्रतियाँ प्रदान करें।*
>
> *4. क्या तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा इस मामले में कोई लिखित टिप्पणी/सलाह भी दी गई थी?*
>
> *5. यदि हाँ, तो तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा दी गई उक्त टिप्पणी/सलाह की प्रति।*
>
> *6. क्या तत्कालीन केंद्रीय विदेश मंत्री ने इस मामले में कोई लिखित टिप्पणी/सलाह दी थी?*

7. यदि हाँ, तो तत्कालीन केंद्रीय विदेश मंत्री द्वारा दी गई सलाह/टिप्पणी की प्रति।

8. क्या इस मामले पर मंत्रियों के समूह की कोई बैठक हुई थी जैसा कि दिनांक 26.12.2007 के संलग्न पत्र में संदर्भित है?

9. यदि हाँ, तो मामले में मंत्रियों के समूह की बैठकों का कार्यवृत्त।

10. संलग्न पत्र दिनांक 26.12.2007 में उल्लिखित पहलुओं/मामले से संबंधित दस्तावेज़ों/पत्राचार/फ़ाइल टिप्पण आदि का पूरा समूह।

11. कोई अन्य संबंधित जानकारी।

12. इस आर.टी.आई. याचिकाकर्ता के संचार पर भी फ़ाइल टिप्पण।"

iii. सी.पी.आई.ओ., दूरसंचार विभाग, संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने दिनांक 10.06.2010 के आदेश के माध्यम से प्रत्यर्थी द्वारा माँगी गई जानकारी का प्रकटीकरण करने से इस आधार पर इनकार कर दिया कि दूरसंचार विभाग के पास जानकारी उपलब्ध नहीं थी। प्रासंगिक अंश निम्नानुसार है:

"(1) किसी भी दस्तावेज़ का अधिप्रमाणीकरण आर.टी.आई. अधिनियम, 2005 की धारा 2(i) में परिभाषित सूचना के दायरे में नहीं आता है।

(2 से 11) ऐसी कोई जानकारी लिखित रूप में उपलब्ध नहीं है।

iv. इसके बाद, प्रत्यर्थी ने दिनांक 16.06.2010 को सी.पी.आई.ओ. के दिनांक 10.06.2020 के आदेश के विरुद्ध अपील दायर की, जिसे दिनांक 30.07.2010 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया। प्रथम अपीलीय प्राधिकारी (एफ़.ए.ए.) के आदेश में टिप्पणी दी गई कि संबंधित सी.पी.आई.ओ. ने प्रत्यर्थी के दिनांक 21.05.2010 के आवेदन का उपयुक्त और उचित उत्तर दिया था।

v. इसके बाद, प्रत्यर्थी ने केंद्रीय सूचना आयोग (सी.आई.सी.) के समक्ष दिनांक 30.07.2010 के आदेश की अपील सं. सी.आई.सी./डी.एस./सी/2010/001762 को प्राथमिकता दी, जिसमें सी.आई.सी. ने आंशिक रूप से प्रत्यर्थी की अपील को अनुमति दी और यह प्रावधान किया कि प्रत्यर्थी को जानकारी देने से इनकार करने का आधार विधि की दृष्टि से संधार्य नहीं था। इसलिए, सी.आई.सी. ने आर.टी.आई. आवेदन को उस पर पुनर्विचार करने के लिए सी.पी.आई.ओ., दूरसंचार विभाग, दूरसंचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय को प्रतिपेषित कर दिया।

vi. इसके बाद, संबंधित सी.पी.आई.ओ. ने प्रत्यर्थी के आवेदन पर नए सिरे से विचार किया और दिनांक 08.02.2011 के आदेश के माध्यम से

तत्कालीन संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री द्वारा तत्कालीन माननीय प्रधान मंत्री को दिनांक 26.12.2007 के पत्र की प्रामाणिकता की पुष्टि करके आर.टी.आई. आवेदन को आंशिक रूप से अनुमति दी। प्रश्न संख्या 2-10 के उत्तर में सी.पी.आई.ओ. ने सूचित किया था कि भारत के तत्कालीन महा सॉलिसिटर, केंद्रीय विदेश मंत्री और केंद्रीय दूरसंचार मंत्री के बीच बैठक के संबंध में दूरसंचार विभाग में कोई दस्तावेज़/जानकारी मौजूद नहीं थी। सी.पी.आई.ओ. को आर.टी.आई. आवेदनों को अन्य मंत्रालयों को अग्रेषित करने का निर्देश दिया गया जो माँगी गई जानकारी प्रदान करने में सक्षम होंगे।

vii. सी.पी.आई.ओ., दूरसंचार विभाग द्वारा अन्य संबंधित सी.पी.आई.ओ. को दिनांक 15.03.2011 को लिखे पत्र के अनुसार, प्रत्यर्थी को सी.पी.आई.ओ. द्वारा दिनांक 07.04.2011 के पत्र के माध्यम से आर.टी.आई. आवेदन के प्रश्न 4 और 5 में माँगे गए मामले में तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा दी गई राय के अस्तित्व से अवगत कराया गया था। यह भी कहा गया कि भारत के महा सॉलिसिटर जैसे विधि अधिकारियों द्वारा दी गई सलाह गोपनीय और विशेषाधिकार प्राप्त जानकारी है, जिसके प्रकटीकरण में आर.टी.आई. अधिनियम, 2005 की धारा 8(1)(घ) के अंतर्गत छूट दी जाएगी।

viii. प्रथम अपीलीय प्राधिकारी ने दिनांक 05.05.2011 के आदेश के अंतर्गत याचिकाकर्ता की अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि माँगी गई जानकारी में आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(*ङ*) के अंतर्गत छूट दी गई है, न कि आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(घ) के अंतर्गत।

ix. उपरोक्त आदेश दिनांक 05.05.2011 को विद्वान सी.आई.सी. के समक्ष अपील संख्या सी.आई.सी./एस.एस./ए/2011/001476 में चुनौती दी गई थी और दिनांक 5.12.2011 के आक्षेपित आदेश के माध्यम से, विद्वान सी.आई.सी. ने याचिकाकर्ता की अपील को अनुमति दी और सी.पी.आई.ओ., विधि और न्याय मंत्रालय को भारत के तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा तत्कालीन दूरसंचार मंत्री को दी गई राय/टिप्पणी प्रदान करने का निर्देश दिया। याचीगण, विधि और न्याय मंत्रालय के साथ-साथ संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने, आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर यह वर्तमान रिट याचिका दायर की है।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना गया और अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया गया।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने शुरुआत में कहा कि केंद्रीय सूचना आयोग ने दिनांक 20.07.2011 के आदेश के माध्यम से अपील सं. सी.आई.सी./एस.एस./ए/2011/000886, जिसका शीर्षक राजीव रंजन वर्मा बनाम

भारत सरकार है, में विभिन्न सरकारी एजेंसियों को भारत के विद्वान महा सॉलिसिटर द्वारा दी गई राय के मुद्दे पर पहले ही न्यायनिर्णयन दे दिया है। उनका कहना है कि सी.आई.सी. ने पहले ही अभिनिर्धारित किया है कि मंत्रालय द्वारा अन्य सरकारी विभागों को दी गई कोई भी सलाह/राय विधि मंत्रालय को वैश्वासिक हैसियत में उपलब्ध जानकारी की श्रेणी में नहीं आती है और आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) किसी भी तरह से ऐसी राय/सलाहों के संबंध में आकृष्ट नहीं होती है। उक्त मामले का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:

> *"(10) आयोग को ऐसा लगता है कि प्रत्यर्थी द्वारा दिया गया बयान आर.टी.आई. अधिनियम के अंतर्गत जानकारी देने से इनकार करने के वास्तविक आधार के बजाय एक अनियत टिप्पणी या एक द्वितीयक तर्क की तरह है। आयोग इस अवसर पर यह स्पष्ट करेगा कि प्रत्यर्थी मंत्रालय द्वारा अन्य सरकारी विभागों को दी गई किसी भी सलाह/राय के अभिलेख वैश्वासिक हैसियत में विधि मंत्रालय को उपलब्ध जानकारी की श्रेणी में नहीं आते हैं। धारा 8(1)(ङ) किसी भी तरह से ऐसी राय/सलाहों के संबंध में आकृष्ट नहीं होती है।*
>
> *(11) उपरोक्त अवलोकन के पीछे के तर्क को निम्नलिखित उदाहरण के प्रकाश में सबसे अच्छी तरह से समझा जा सकता है। प्रत्यर्थी मंत्रालय का विभाग मुख्य रूप से केंद्र सरकार के विभिन्न मंत्रालयों को सलाह देने से संबंधित है। इस प्रकार, विधि मंत्रालय को केंद्र सरकार के किसी भी अन्य विभाग से जोड़ने वाली एक दो-तरफ़ा प्रणाली मौजूद है, अर्थात् एक तरफ़ राय माँगने वाली फ़ाइल संबंधित विभाग से विधि मंत्रालय तक जाती*

है और दूसरी तरफ़, उस फ़ाइल पर दी गई राय विधि कार्य विभाग, विधि मंत्रालय से संबंधित विभाग तक जाती है।

(12) तर्क के लिए, यदि विधि मंत्रालय के मत को स्वीकार भी कर लिया जाए, तो दो-तरफ़ा प्रणाली, जिसके माध्यम से फ़ाइल विधि मंत्रालय और संबंधित विभाग के बीच यात्रा करती है, एक रक्षणीय प्रणाली बन जाएगी जिसमें ऐसी जानकारी होगी जिसे आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 (1) (ङ) के अंतर्गत किसी भी आकस्मिकता में कभी भी प्रकट नहीं किया जाएगा। ***इस प्रकार, ऐसी प्राक्कल्पनात्मक स्थिति में, विधि मंत्रालय द्वारा केंद्र सरकार के किसी भी विभाग को दी गई राय/सलाह को आर.टी.आई. अधिनियम के अंतर्गत प्रकटीकरण से छूट मिल जाएगी और भले ही संबंधित विभाग ऐसी सलाह/राय को प्रकट करने के लिए तैयार और इच्छुक है जो उस विभाग के पास या उसके नियंत्रण में है, फिर भी वह ऐसा करने में असमर्थ होगा क्योंकि ऐसी राय/सलाह की प्रकृति की जानकारी को आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 (1) (ङ) के अंतर्गत छूट दी जाएगी। यह निश्चित रूप से आर.टी.आई. अधिनियम की भाषा और भाव द्वारा समर्थित स्थिति नहीं है।***

(13) इस प्रकार, आयोग का मत है कि विधि मंत्रालय द्वारा भारत सरकार के संबंधित विभाग को दी गई विधिक राय / सलाह का प्रकटीकरण आर.टी.आई. अधिनियम के अंतर्गत किया जाना है या नहीं, इसका निर्णय उस सलाह को माँगने वाले विभाग द्वारा किया जाना चाहिए और वह विभाग / मंत्रालय इसके लिए स्वतंत्र होगा कि यदि वह आर.टी.आई. अधिनियम के अंतर्गत माँगी गई जानकारी प्रदान नहीं करना चाहता है तो वह

आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 (1) के प्रासंगिक खंड का अवलंब ले सकता है।"

(ज़ोर दिया गया)

6. उन्होंने आगे इस न्यायालय द्वारा **रि.या.(सि) 8687/2011** अर्थात् भारत संघ बनाम राजीव रंजन वर्मा में दिनांक 22.01.2018 के पारित आदेश पर भरोसा किया, जिसमें राजीव रंजन वर्मा (पूर्वोक्त) में माननीय सी.आई.सी. के आदेश को चुनौती देने वाली रिट याचिका खारिज कर दी गई थी। प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:

"(8) सी.आई.सी. ने उपरोक्त तर्कों को स्वीकार कर लिया और अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी द्वारा अपेक्षित जानकारी उस प्राधिकारी से माँगी जानी चाहिए जिसके पास संबंधित फ़ाइल है। सी.आई.सी. ने टिप्पणी की कि वर्तमान मामले में, श्री प्रणव कुमार का मूल विभाग होने के नाते कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग ने फ़ाइल तैयार की होगी और इसलिए, उक्त विभाग से जानकारी माँगी जानी चाहिए। तदनुसार, सी.आई.सी. ने याचिकाकर्ता के सी.पी.आई.ओ. को आवेदन को कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग के सी.पी.आई.ओ. को अंतरित करने का निर्देश दिया और आगे निर्देश दिया कि कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग के संबंधित सी.पी.आई.ओ. को अधिनियम के अंतर्गत *प्रत्यर्थी के आवेदन के संबंध में अधिनियम के प्रावधानों के* अंतर्गत *उचित कार्रवाई करनी चाहिए।*

(9) सी.आई.सी. ने यह भी टिप्पणी की कि जानकारी को प्रकट करने या न करने का निर्णय संबंधित विभाग को लेना होगा और

और यदि उक्त विभाग सूचना चाहने वाले द्वारा माँगी गई जानकारी प्रदान न करने का विकल्प चुनता है तो यह अधिनियम की धारा 8(1) के प्रासंगिक उपबंधों का अवलंब लेने के लिए स्वतंत्र होगा।

(11) इस याचिका में उक्त मुद्दे पर न्यायनिर्णयन देना आवश्यक नहीं है क्योंकि, जैसा कि सी.आई.सी. द्वारा सही अभिनिर्धारित किया गया है, यह निर्णय कि प्रत्यर्थी द्वारा माँगी गई जानकारी उसे दी जाएगी या नहीं, संबंधित विभाग को लेना होगा (इस मामले में कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग)। आक्षेपित आदेश का पैराग्राफ़ 13 नीचे दिया गया है:

> *"13. इस प्रकार, आयोग का मत है कि विधि मंत्रालय द्वारा भारत सरकार के संबंधित विभाग को दी गई विधिक राय / सलाह का प्रकटीकरण आर.टी.आई. अधिनियम के अंतर्गत किया जाना है या नहीं, इसका निर्णय उस सलाह को माँगने वाले विभाग द्वारा किया जाना चाहिए और वह विभाग / मंत्रालय इसके लिए स्वतंत्र होगा कि यदि वह आर.टी.आई. अधिनियम के* अंतर्गत *माँगी गई जानकारी प्रदान नहीं करना चाहता है तो वह आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 (1) के प्रासंगिक खंड का अवलंब ले सकता है।"*

7. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने उपरोक्त दोनों आदेशों के निष्कर्षों पर भरोसा करते हुए प्रस्तुत किया कि विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा दी गई सलाह/पत्र को अन्य मंत्रालयों को प्रदान न करने का निर्णय संबंधित विभाग को सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 8(1) के अंतर्गत प्रासंगिक

उपबंधों का अवलंब लेकर करना होगा। इसलिए, उनका कहना है कि, इस न्यायालय के निर्देशों के अनुसार, विधि और न्याय मंत्रालय और दूरसंचार मंत्रालय आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) का अवलंब लेकर महा सॉलिसिटर द्वारा दूरसंचार मंत्री को दी गई सलाह/पत्र का प्रकटीकरण करने से इनकार करने के हकदार हैं।

8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा दी गई राय के लिए, विधि और न्याय मंत्रालय ने सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 8(1)(ङ) के अंतर्गत छूट का अवलंब लिया है। उनका कहना है कि विद्वान महा सॉलिसिटर द्वारा किसी भी मंत्रालय को दी गई विधिक राय केवल विधि द्वारा स्थापित वैश्वासिक संबंध के अंतर्गत दी जाती है। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने कोक्कंडा बी. पूंडाचा बनाम के.डी. गंगापति, **(2011) 12 एस.सी.सी. 600** के मामले में शीर्ष न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें शीर्ष न्यायालय ने प्रावधान किया कि एक वकील और एक कक्षीकार के बीच संबंध की प्रकृति एक वैश्वासिक संबंध की प्रकृति में है, और संबंध में एक गोपनीय चरित्र होता है जिसके लिए उच्च स्तर की निष्ठा और व्यक्तिगत विश्वास की आवश्यकता होती है।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कुंजुकृष्णन नायर बनाम केरल राज्य, **1998 एस.सी.सी. ऑनलाइन केरल 316** में, केरल उच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा जताया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि एक

सरकारी विधि अधिकारी/ प्लीडर और सरकार के बीच का संबंध एक कक्षीकार और एक वकील का होता है, और इसलिए, संबंधित सरकारी विभाग को दी गई सलाह और जानकारी एक सरकारी प्लीडर द्वारा वैश्वासिक हैसियत में दी जाती है। अंत में, यह स्थापित करने के लिए कि इस तरह के संबंध के अंतर्गत कार्य को एक वैश्वासिक संबंध कहा जाएगा, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने केरल उच्च न्यायालय द्वारा सचिव महाधिवक्ता बनाम राज्य सूचना आयुक्त और अन्य, **2022 एस.सी.सी. ऑनलाइन केरल 4844** में पारित निर्णय पर भरोसा किया, जिसमें यह टिप्पणी की गई कि किसी राज्य के महाधिवक्ता और उस राज्य की सरकार के बीच संबंध एक वैश्वासिक संबंध की प्रकृति में है और महाधिवक्ता द्वारा दी गई राय को आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) के अंतर्गत छूट दी जाएगी।

10. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि विधि अधिकारी और सरकार के बीच एक वैश्वासिक संबंध में, विधि अधिकारी से अपेक्षा की जाती है कि वह लाभार्थी अर्थात् राज्य के लाभ और फ़ायदे के लिए अपने कर्तव्यों का विश्वासपूर्वक निर्वहन करे। इसलिए, उन्होंने कहा कि महा-सॉलिसिटर की विधिक राय वाला दिनांक 26.12.2007 का पत्र प्राधिकरण के निर्णय लेने की प्रक्रिया में सहायता के लिए प्रस्तुत किया गया था, और सद्भाव और विश्वास में प्रस्तुत किया गया था, और इसलिए, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 8(1)(ङ) के अंतर्गत प्रकटीकरण से छूट दी जानी चाहिए।

11. इसके बाद याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आक्षेपित आदेश यांत्रिक रूप से सी.आई.सी. द्वारा उसी सिद्धांत को लागू करके पारित किया गया था जो राजीव रंजन वर्मा मामले (पूर्वोक्त) में लागू किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने उसमें उत्पन्न प्रश्न का संदर्भ दिया, जो विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा अन्य सरकारी विभागों को दी गई राय के प्रकटीकरण से संबंधित था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में सी.आई.सी. के समक्ष जो प्रश्न उठा, वह पूरी तरह से भारत के महा सॉलिसिटर की राय के प्रकटीकरण से संबंधित था, न कि विधि और न्याय मंत्री की राय के प्रकटीकरण से। इसलिए, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि भारत सरकार/सरकारी विभागों के मंत्रालय के लिए भारत के विद्वान महा सॉलिसिटर की राय भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 के उपबंधों के अंतर्गत एक विशेषाधिकार प्राप्त दस्तावेज़ है। उन्होंने भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 126 पर भरोसा जताया, जो एक बैरिस्टर, अटॉर्नी, प्लीडर या वकील के बीच अपने कक्षीकारों के साथ उनकी स्पष्ट सहमति के बिना होने वाले संचार के प्रकटीकरण को वर्जित करता है। इसलिए, उन्होंने तर्क दिया कि विद्वान महा सॉलिसिटर द्वारा दी गई विधिक राय/सलाह का आर.टी.आई. अधिनियम के अंतर्गत प्रकटीकरण नहीं किया जा सकता है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 129 पर भी भरोसा जताया, जो एक कक्षीकार को उनके और उनके कानूनी पेशेवर सलाहकार के बीच होने वाले किसी भी गोपनीय संचार का प्रकटीकरण करने से वर्जित करता है।

इसलिए, विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 126 से धारा 131 स्पष्ट रूप से एक वकील और कक्षीकार के बीच विशेषाधिकार प्राप्त दस्तावेज़ों के गैर-प्रकटीकरण का प्रावधान करती है। इस तर्क का समर्थन करने के लिए, अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 22 का वकीलों और कक्षीकारों के बीच दिए जाने वाले विशेषाधिकार पर कोई अभिभावी प्रभाव नहीं पड़ता है, और इस प्रकार, भारत के तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा दूरसंचार मंत्रालय को दी गई राय/टिप्पणी को छूट दी जाएगी।

12. *इसके विपरीत,* प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) का दायरा केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड बनाम आदित्य बंदोपाध्याय, **(2011) 8 एस.सी.सी. 495** मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पहले ही तय किया जा चुका है। निर्भर किया गया पैराग्राफ़ इस प्रकार है:

> *".....एक दार्शनिक और बहुत व्यापक अर्थ में, परीक्षा निकायों को एक परीक्षा में भाग लेने वाले विद्यार्थियों के संदर्भ में एक वैश्वासिक हैसियत में कार्य करने वाला कहा जा सकता है, जैसा कि एक सरकार अपने नागरिकों पर शासन करते समय करती है या जैसा कि वर्तमान पीढ़ी पर्यावरण को संरक्षित करते हुए भविष्य की पीढ़ी के संदर्भ में करती है। लेकिन 'किसी व्यक्ति को उसके वैश्वासिक संबंध में उपलब्ध जानकारी' शब्द का उपयोग आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(ठ)(ङ) में इसके सामान्य*

और सुस्थापित अर्थ में उन व्यक्तियों के संदर्भ में किया गया है, जो विशिष्ट लाभार्थी या लाभार्थियों के लिए वैश्वासिक हैसियत में कार्य करते हैं, जिनके विश्वासी के कृत्यों से संरक्षित या लाभान्वित होने की उम्मीद की जाती है.....''

13. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि वर्तमान मामले में मंत्री को विधि अधिकारी की राय का लाभार्थी नहीं कहा जा सकता है। उनका कहना है कि एक सार्वजनिक प्राधिकरण का दूसरे सार्वजनिक प्राधिकरण को अपनी राय देना बड़े पैमाने पर जनता के लाभ के लिए है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भारत संघ बनाम कर्नल वी.के. शाद, रि.या. (सि.) 499/2012 में इस माननीय न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया और यह प्रावधान किया कि एक संस्थागत ढाँचे में एक संबंध में, जैसे कि एक अंतर-सरकारी, एक कार्मिक द्वारा दूसरे कार्मिक को प्रदान की गई टिप्पणी को एक वैश्वासिक संबंध को जन्म देने वाला नहीं कहा जा सकता है। इसलिए, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि चूँकि सरकार और विभिन्न मंत्रालय एक संस्थागत व्यवस्था का हिस्सा हैं, इसलिए अंतर-मंत्रालय द्वारा प्रदान की गई जानकारी या राय को वैश्वासिक प्रकृति का संबंध स्थापित नहीं करना चाहिए। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि रि.या.(सि.) 8687/2011 में इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 22.01.2018 का आदेश यह प्रावधान नहीं करता है कि विधि और न्याय मंत्रालय द्वारा केंद्र सरकार के अन्य विभागों को

दी गई राय और/या सलाह सभी परिस्थितियों में आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1) के अंतर्गत तथ्यतः प्रकटीकरण से छूट प्राप्त है।

14. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि विधि और न्याय मंत्रालय सार्वजनिक हित को आगे बढ़ाने के लिए अन्य विभागों और मंत्रालयों के साथ-साथ कैबिनेट को सही विधिक राय देने के लिए बाध्य है, और इसलिए, अन्य विभागों को ऐसी जानकारी का लाभार्थी नहीं माना जा सकता क्योंकि विधि मंत्रालय और अन्य विभागों दोनों का उद्देश्य लोक हित को बनाए रखना है, और यदि ऐसी सलाह लोक हित के लिए दी जाती है, तो इसे आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(2) के अंतर्गत प्रदान किया जाना चाहिए। इसके अलावा, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि इसी तरह, विधि और न्याय मंत्रालय के अंतर्गत देश के विधि अधिकारियों, जैसे कि भारत के महाधिवक्ता और महा सॉलिसिटर, से किसी भी मंत्री को व्यक्तिगत रूप से राय देते समय लोक हित को बनाए रखने की अपेक्षा की जाती है, और इसलिए, इसे आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 के अंतर्गत प्रकटीकरण से छूट नहीं दी जानी चाहिए।

15. अधिवक्ता ने आगे कहा कि वर्तमान मामले में, विभिन्न 2जी स्पेक्ट्रम बैंड के आवंटन की प्रक्रिया पर तत्कालीन महा सॉलिसिटर द्वारा दूरसंचार मंत्री को दी गई सलाह से संबंधित जानकारी माँगी गई थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इसके बाद भारत सरकार द्वारा स्पेक्ट्रम बैंड आवंटित करने का निर्णय महा

सॉलिसिटर द्वारा दी गई सलाह पर आधारित था। उन्होंने आगे कहा कि टेलीकॉम अनुज्ञप्ति और 2जी स्पेक्ट्रम का आवंटन 2012 में जनहित याचिका केंद्र बनाम भारत संघ, (2012) 3 एस.सी.सी. 1 मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया था और अनुज्ञप्तिधारियों को नई अनुज्ञप्तियाँ जारी की जानी थीं, और इस प्रकार, महा सॉलिसिटर और अन्य विधि अधिकारियों द्वारा दूरसंचार मंत्री को दी गई रायों को सार्वजनिक करने में व्यापक लोक हित निहित था।

16. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उपर्युक्त उपबंधों पर निर्भरता रखना गलत है क्योंकि उनका कहना है कि आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 22 व्यापक रूप से वर्णित है और शासकीय गुप्त बात अधिनियम सहित अन्य सभी विधियों पर अभिभावी है। इसलिए, उन्होंने प्रस्तुत किया कि किसी भी जानकारी के प्रकटीकरण से छूट को आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1) के अंतर्गत प्रदान की गई छूट के अंतर्गत सम्मिलित किया जाना चाहिए।

17. इस न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री और सभी पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुतियों का परिशीलन किया है और रि.या.(सि.) 8687/2011 में दिनांक 22.05.2018 के आदेश पर ध्यान दिया है। इसका प्रासंगिक पैराग्राफ़ इस प्रकार है:

> *"12. यह मुद्दा, कि क्या कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) के* अंतर्गत *माँगी गई जानकारी से*

इनकार कर सकता है, तभी उठेगा जब संबंधित सी.पी.आई.ओ. प्रत्यर्थी के अनुरोध का उत्तर देगा।

13. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस स्तर पर आक्षेपित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस मामले में याचिकाकर्ता द्वारा उठाया गया प्रश्न विवृत है।''

18. वर्तमान रिट याचिका में उठाए गए मुद्दे पर रि.या.(सि.) 8687/2011 में न्यायनिर्णयन नहीं दिया गया है।

19. आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) किसी व्यक्ति को उसके वैश्वासिक संबंध में उपलब्ध जानकारी के प्रकटीकरण की छूट देती है, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी इस बात से संतुष्ट न हो कि व्यापक लोक हित ऐसी जानकारी के प्रकटीकरण को आवश्यक बनाता है। आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) इस प्रकार है:

"सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 8

(1) इस अधिनियम में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी नागरिक को निम्नलिखित सूचना देने की बाध्यता नहीं होगी,–

.....

(ङ) किसी व्यक्ति को उसके वैश्वासिक संबंध में उपलब्ध सूचना, जब तक कि सक्षम प्राधिकारी का यह समाधान नहीं हो जाता है

कि ऐसी सूचना के प्रकटन से विस्तृत लोक हित का समर्थन होता है;....."

20. वर्तमान स्थिति में, न्यायालय भारत के महा सॉलिसिटर और किसी भी सरकारी मंत्रालय, जिसे विधिक राय/सलाह दी जाती है, के बीच बने संबंधों का परीक्षण करना उचित समझता है।

21. सी.पी.आई.ओ., <u>भारत के उच्चतम न्यायालय बनाम सुभाष चंद्र अग्रवाल,</u> **(2020) 5 एस.सी.सी. 481** में, उच्चतम न्यायालय ने वैश्वासिक संबंध के दायरे को समझाते हुए, इस प्रकार कहा:

"44. भारतीय रिज़र्व बैंक [भारतीय रिज़र्व बैंक बनाम जयंतीलाल एन. मिस्त्री, (2016) 3 एस.सी.सी. 525 : (2016) 2 एस.सी.सी. (सीआईवी) 382] में, इस न्यायालय ने एडवांस्ड लॉ लेक्सिकॉन, तीसरे संस्करण, 2005 में "वैश्वासिक संबंध" की परिभाषा का संदर्भ देते हुए आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 की उप-धारा (1) के खंड (ङ) में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "विश्वासपूर्ण संबंध" की व्याख्या की थी, जो इस प्रकार है : (एस.सी.सी. पृष्ठ 559, पैरा 57)"57. [...] वैश्वासिक संबंध.—स्क ऐसा संबंध जिसमें एक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह वैश्वासिक संबंध के दायरे में आने वाले मामलों पर दूसरे के लाभ के लिए कार्य करे।... वैश्वासिक संबंध आमतौर पर चार स्थितियों में से एक में उत्पन्न होता है: (1) जब एक व्यक्ति दूसरे की निष्ठावान अखंडता पर भरोसा करता है, जिसे परिणामस्वरूप पहले व्यक्ति पर श्रेष्ठता या प्रभाव प्राप्त होता है, (2) जब एक व्यक्ति दूसरे पर नियंत्रण और ज़िम्मेदारी ग्रहण करता है, (3) जब एक व्यक्ति का कर्तव्य

है कि वह संबंध के दायरे में आने वाले मामलों पर दूसरे के लिए कार्य करे या उसे सलाह दे, या (4) जब ऐसा कोई विशिष्ट संबंध मौजूद हो, जिसे पारंपरिक रूप से परस्पर वैश्वासिक कर्तव्यों के रूप में मान्यता दी गई है, जैसे कि एक वकील और एक कक्षीकार, या एक स्टॉकब्रोकर और एक ग्राहक के बीच।" इसके बाद, न्यायालय ने शासकीय सिद्धांतों को सूचीबद्ध करके वैश्वासिक संबंध की रूपरेखा को रेखांकित किया था, जो इस प्रकार है : (एस.सी.सी. पृष्ठ. 559, पैरा 58) "58. [...] (i) कोई विरोधाभास नहीं नियम - एक विश्वासी को स्वयं को ऐसी स्थिति में नहीं रखना चाहिए जहाँ उसका अपना हित उसके ग्राहक या लाभार्थी के साथ विरोधाभास में हो। "संघर्ष की एक वास्तविक विवेकपूर्ण संभावना" होनी चाहिए। (ii) कोई लाभ नहीं नियम - एक विश्वासी को अपने ग्राहक, लाभार्थी की कीमत पर अपनी स्थिति से लाभ नहीं उठाना चाहिए। (iii) अविभाजित वफ़ादारी नियम - एक विश्वासी को लाभार्थी के प्रति पूरी वफ़ादारी निभानी होती है, न कि स्वयं को ऐसी स्थिति में रखना जहाँ एक व्यक्ति के प्रति उसका कर्तव्य दूसरे ग्राहक के प्रति उसके कर्तव्य से टकराए। इस कर्तव्य का एक परिणाम यह है कि एक विश्वासी को ग्राहक को वह सभी जानकारी उपलब्ध करानी होगी जो ग्राहक के कार्यों से संबंधित है। (iv) गोपनीयता का कर्तव्य - एक विश्वासी को केवल विश्वास में प्राप्त जानकारी का उपयोग करना चाहिए और इसे अपने लाभ के लिए, या किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिए उपयोग नहीं करना चाहिए।"

45. *वैश्वासिक संबंध, भले ही वे औपचारिक, अनौपचारिक, स्वैच्छिक या अनैच्छिक हों, किसी संबंध को वैश्वासिक संबंध के*

रूप में वर्गीकृत करने के लिए चार शर्तों को पूरा करना होगा। चार सिद्धांतों में से प्रत्येक में, विश्वास, भरोसा, विश्वासी की श्रेष्ठ शक्ति या प्रमुख स्थिति और वैश्वासिक पर लाभार्थी की निर्भरता पर ज़ोर दिया गया है, जो विश्वासी पर उसके स्वयं के बजाए लाभार्थी के सद्भाव और लाभ के लिए कार्य करने और उसका संरक्षण करने की ज़िम्मेदारी डालते हैं। धारा 8(1)(ङ) एक विधिक स्वीकृति है कि संबंधों में नैतिक या सदाचारपूर्ण संबंध या कर्तव्य हैं जो मानक और विशिष्ट अधिकारों और दायित्वों के साथ संविदात्मक, नियमित या यहाँ तक कि विशेष संबंधों से परे अधिकारों और दायित्वों का निर्माण करते हैं। संविदात्मक या गैर-वैश्वासिक संबंधों के लिए यह आवश्यक हो सकता है कि पक्ष को दूसरे के हितों का संरक्षण और बढ़ावा देना चाहिए और नुकसान या क्षति नहीं पहुँचानी चाहिए, लेकिन वैश्वासिक संबंध एक सकारात्मक दायित्व डालता है और माँग करता है कि विश्वासी को लाभार्थी का संरक्षण करना चाहिए और व्यक्तिगत स्व-हित को बढ़ावा नहीं देना चाहिए। एक विश्वासी व्यक्ति की निष्ठा, कर्तव्य और दायित्व बाज़ार की नैतिकता से अधिक कठोर हैं और यह केवल ईमानदारी नहीं है, बल्कि सम्मान की सीमा है जो व्यवहार का सबसे संवेदनशील मानक है जिसे लागू किया जाता है (मेनहार्ड बनाम सैल्मन [मेनहार्ड बनाम सैल्मन, (1928) 164 एन.ई. 545, 546 : (1928) 249 एन.वाई. 456] में, न्या., कार्डोज़ो की राय देखें)। इस प्रकार, वैश्वासिक संबंधों के मामलों में न्यायिक समीक्षा का स्तर गहन है क्योंकि अपेक्षित प्रतिबद्धता और वफ़ादारी का स्तर गैर-वैश्वासिक संबंधों की तुलना में अधिक है। वैश्वासिक संबंध उस कानून के कारण

उत्पन्न हो सकता है जिसके लिए एक विश्वासी को सत्यनिष्ठा और निष्ठा के साथ निस्वार्थ भाव से कार्य करने की आवश्यकता होती है और दूसरा पक्ष, अर्थात् लाभार्थी, विश्वासी में रखे गए विवेक और विश्वास पर निर्भर करता है। एक संविदात्मक, वैधानिक और संभवतः सभी संबंध एक व्यापक क्षेत्र को सम्मिलित करते हैं, लेकिन एक वैश्वासिक संबंध एक सीमित क्षेत्र या एक अधिनियम तक ही सीमित हो सकता है, क्योंकि संबंधों के कई पहलू हो सकते हैं। इस प्रकार, संबंध आंशिक रूप से वैश्वासिक और आंशिक रूप से गैर-वैश्वासिक हो सकते हैं, जिसमें से पहला संबंध किसी विशेष कार्य या कार्रवाई तक ही सीमित होता है, जिसे दो पक्षों के बीच बातचीत और संबंध में संपूर्ण रूप से स्पष्ट होने की आवश्यकता नहीं होती है। एक गैर-वैश्वासिक संबंध को वैश्वासिक संबंध या किसी कार्य से अलग, लाभार्थी की तुलना में विश्वासी की नैतिक, व्यक्तिगत या वैधानिक ज़िम्मेदारी के कारण किसी विशेष लेन-देन के संदर्भ में विश्वासी की ओर से अपेक्षित भरोसे और ईमानदारी के उच्च मानक की आवश्यकता करेगी, जिसके परिणामस्वरूप लाभार्थी की निर्भरता बढ़ती है। यह विश्वासी या उसके द्वारा धारण किए गए पद के बेहतर ज्ञान और प्रशिक्षण के कारण उत्पन्न हो सकता है।''

22. केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड बनाम आदित्य बंदोपाध्याय (पूर्वोक्त) मामले में, उच्चतम न्यायालय ने एक विश्वासी के कर्तव्यों को विस्तार से बताया है, और निम्नानुसार कहा है:

*"**39.** शब्द "विश्वासी" से तात्पर्य एक ऐसे व्यक्ति से है जिसका कर्तव्य है कि वह दूसरे के लाभ के लिए कार्य करे, सद्भाव और स्पष्टवादिता दिखाए, जहाँ ऐसा अन्य व्यक्ति कर्तव्य निभाने वाले या उसका निर्वहन करने वाले व्यक्ति पर भरोसा और विशेष विश्वास रखता है। शब्द "वैश्वासिक संबंध" का उपयोग ऐसी स्थिति या लेन-देन का वर्णन करने के लिए किया जाता है जहाँ एक व्यक्ति (लाभार्थी) अपने मामलों, व्यवसाय या लेनदेन के संबंध में दूसरे व्यक्ति (विश्वासी) पर पूरा भरोसा रखता है। यह शब्द उस व्यक्ति को भी संदर्भित करता है जो किसी चीज़ को दूसरे (लाभार्थी) के भरोसे रखता है। विश्वासी से अपेक्षा की जाती है कि वह ईमानदारी से और लाभार्थी के लाभ और फ़ायदे के लिए कार्य करेगा, और लाभार्थी या लाभार्थी से संबंधित चीज़ों के साथ कार्य करने में सद्भावना और निष्पक्षता का उपयोग करेगा। यदि लाभार्थी ने विश्वासी को कोई चीज़, उस चीज़ को संभालकर रखने के लिए या सौंपी गई वस्तु के संबंध में या उसके संबंध में कुछ कार्य निष्पादित करने के लिए, सौंपी है, तो विश्वासी को गोपनीयता से कार्य करना होगा और उससे अपेक्षा की जाती है कि वह उस चीज़ या जानकारी का प्रकटीकरण किसी तीसरे पक्ष से न करे।"*

23. भारत संघ बनाम केंद्रीय सूचना आयोग, **2009 एस.सी.सी. ऑनलाइन दिल्ली 3876** में, इस माननीय न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:

"7. वूल्फ बनाम सुपीरियर कोर्ट, (2003) 107 कैल.अप चौथा 25 में, कैलिफ़ोर्निया कोर्ट ऑफ़ अपील्स ने वैश्वासिक संबंध को इस प्रकार परिभाषित किया "लेन-देन के पक्षों के बीच मौजूद

कोई भी संबंध जहाँ एक पक्ष दूसरे पक्ष के लाभ के लिए अत्यंत सद्भावना के साथ कार्य करने के लिए बाध्य है। ऐसा संबंध आम तौर पर तब उत्पन्न होता है जब एक व्यक्ति दूसरे की सत्यनिष्ठा पर भरोसा जताता है और ऐसे संबंध में जिस पक्ष पर भरोसा जताया जाता है, अगर वह स्वेच्छा से विश्वास स्वीकार कर लेता है या मान लेता है तो वह दूसरे पक्ष की जानकारी और सहमति के बिना दूसरे पक्ष के हितों से संबंधित अपने कृत्यों से कोई लाभ नहीं उठा सकता।

8. वैश्वासिक को स्पष्ट रूप से सहमत या कम से कम सचेत रूप से की गई एक व्यवस्था के रूप में वर्णित किया जा सकता है जिसमें एक पक्ष दूसरे के निर्णय या सलाह पर भरोसा करता है, विश्वास करता है और निर्भर करता है। वैश्वासिक संबंध औपचारिक, अनौपचारिक, स्वैच्छिक या अनैच्छिक हो सकते हैं। यह विधिक स्वीकृति है कि संबंधों में नैतिक या कर्तव्यपरायण संबंध या कर्तव्य होते हैं जो अधिकार और दायित्व का निर्माण करते हैं। वैश्वासिक दायित्व एक संविदा द्वारा बनाए जा सकते हैं लेकिन वे संविदात्मक संबंधों से भिन्न होते हैं क्योंकि वे लाभार्थियों द्वारा प्रतिफल के भुगतान के बिना भी मौजूद हो सकते हैं और संविदात्मक कर्तव्यों और दायित्वों के विपरीत, वैश्वासिक दायित्वों को पक्षकारगण के अनुरूप आसानी से तैयार और संशोधित नहीं किया जा सकता है। एक वैश्वासिक संबंध में, मुख्य बल विश्वास और निर्भरता, विश्वासी की श्रेष्ठ शक्ति और विश्वासी पर लाभार्थी की निर्भरता पर होता है। इसके लिए विश्वासी व्यक्ति की प्रभावी स्थिति, निष्ठा और ज़िम्मेदारी की आवश्यकता होती है ताकि वह सद्भाव के साथ कार्य कर सके

और लाभार्थी के लाभ और उसके संरक्षण के लिए कार्य कर सके, न कि स्वयं के लिए।"

24. सी.पी.आई.ओ., उच्चतम न्यायालय बनाम सुभाष चंद्र अग्रवाल मामले में, उच्चतम न्यायालय की टिप्पणियों के आधार पर, यह न्यायालय उल्लेख करता है कि दो व्यक्तियों के बीच एक विश्वासी और लाभार्थी का संबंध स्थापित करने के लिए, चाहे वह स्वैच्छिक, अनैच्छिक, औपचारिक या अनौपचारिक हो, उसे भारतीय रिज़र्व बैंक बनाम जयंतीलाल एन. मिस्त्री, **(2016) 3 एस.सी.सी. 525** मामले में स्थापित चार नियमों और कर्तव्यों अर्थात्, *कोई विरोधाभास नहीं नियम, कोई लाभ नहीं नियम, अविभाजित वफ़ादारी नियम और गोपनीयता का कर्तव्य*, की कसौटी पर खरा उतरना होगा। वर्तमान मामले में, भारत के महा सॉलिसिटर और भारत संघ और अन्य केंद्रीय मंत्रालयों के बीच संबंधों का परीक्षण करने के लिए, भारत संघ के एक विधि अधिकारी की नियुक्ति के लिए नियमों, अर्थात् विधि अधिकारी (सेवा की शर्तें) नियम, 1987, का परिशीलन करना महत्वपूर्ण है। समान राज्यों का नियम 5 इस प्रकार है:

"5. कर्तव्य- यह एक विधि अधिकारी का कर्तव्य होगा -

(क) ऐसे विधिक मामलों पर भारत सरकार को सलाह देना, और विधिक चरित्र के ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करना, जो समय-समय पर भारत सरकार द्वारा उसे संदर्भित या समनुदेशित किए जाएँ।

(ख) भारत सरकार की ओर से उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय में उन मामलों (वाद, रिट याचिका, अपील और अन्य कार्यवाहियों सहित) में, जिनमें भारत सरकार एक पक्ष के रूप में संबंधित है या अन्यथा रुचि रखती है, जब भी आवश्यकता हो, उपस्थित होना।

(ग) संविधान के अनुच्छेद 143 के अंतर्गत *राष्ट्रपति द्वारा उच्चतम न्यायालय को दिए गए किसी भी संदर्भ में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करना; और*

(घ) ऐसे अन्य कार्यों का निर्वहन करना जो किसी विधि अधिकारी को संविधान या उस समय लागू किसी अन्य विधि द्वारा या उसके अंतर्गत *प्रदान किए जाते हैं।"*

25. विधि अधिकारी (सेवा की शर्तें) नियमों के नियम 8 में निम्नानुसार कहा गया है:

"8. प्रतिबंध- (1) कोई विधि अधिकारी -

(क) भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार या किसी विश्वविद्यालय, सरकारी स्कूल या कॉलेज, स्थानीय प्राधिकरण, लोक सेवा आयोग, बंदरगाह न्यास, बंदरगाह आयुक्त, सरकारी सहायता प्राप्त या सरकारी प्रबंधित अस्पताल, कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 617 में परिभाषित सरकारी कंपनी, राज्य के स्वामित्व या नियंत्रित कोई भी निगम, कोई निकाय या संस्था जिसमें सरकार का विशेष हित है, को छोड़कर किसी भी पक्ष के लिए किसी भी न्यायालय में पक्षपत्र नहीं बनाएगा;

(ख) भारत सरकार या किसी सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के विरुद्ध किसी भी पक्ष को, या ऐसे मामलों में सलाह नहीं देगा, जिसमें उसे भारत सरकार या किसी सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम को सलाह देने या उसकी ओर से पेश होने के लिए बुलाए जाने की संभावना है;

(ग) भारत सरकार की अनुमति के बिना किसी भी कंपनी या निगम में किसी भी कार्यालय में नियुक्ति स्वीकार नहीं करेगा;

(घ) भारत सरकार के किसी भी मंत्रालय या विभाग या किसी भी वैधानिक संगठन या किसी भी सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम को सलाह नहीं देगा, जब तक कि इस संबंध में प्रस्ताव या संदर्भ विधि और न्याय मंत्रालय, विधि कार्य विभाग से प्राप्त न हो।"

26. विधि अधिकारियों की नियुक्ति के नियमों के परिशीलन से यह पता चलता है कि विधिक मामलों पर भारत सरकार को सलाह देना विधि अधिकारियों का कर्तव्य है। किसी भी विधि अधिकारी को भारत सरकार की अनुमति के बिना किसी भी पक्ष के लिए पक्षपत्र बनाने की अनुमति नहीं है। विधि अधिकारी को भारत सरकार या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम के विरुद्ध किसी भी पक्ष को सलाह देने से भी प्रतिबंधित किया गया है।

27. नियमों के साथ-साथ उच्चतम न्यायालय के निर्णयों से जो देखा जा सकता है वह यह है कि भारत के महा सॉलिसिटर और भारत सरकार के बीच का संबंध एक विश्वासी और एक लाभार्थी का है। भारत के महा सॉलिसिटर का कर्तव्य है कि वह संघ और अन्य विभागों के लाभ के लिए सद्भावना से काम

करे, जहाँ लाभार्थी द्वारा विद्वान महा सॉलिसिटर पर भरोसा और निर्भरता मौजूद है। इस न्यायालय को याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्क में कोई दोष नहीं मिला कि विद्वान महा सॉलिसिटर द्वारा भारत संघ और अन्य विभिन्न सरकारी विभागों को दी गई सलाह एक विश्वासी प्रकृति की है, और इसलिए आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1)(ङ) के अपवाद का अवलंब लिया गया है।

28. सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 12 अक्टूबर, 2005 को अधिनियमित किया गया था, जिसका उद्देश्य इस देश के नागरिकों को किसी भी सार्वजनिक प्राधिकरण से जानकारी प्राप्त करने के लिए सशक्त बनाना और बदले में सार्वजनिक प्राधिकारियों को आम जनता के प्रति जवाबदेह बनाकर नियंत्रण में रखकर असली लोकतंत्र के सिद्धांतों को बनाए रखना था। हालाँकि, जैसा कि उपरोक्त चर्चा में उजागर किया गया है, सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के दायरे में सभी सूचनाओं को प्रकट नहीं किया जा सकता है। आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8, जिसका शीर्षक "सूचना के प्रकट किए जाने से छूट" है, धारा 8(1)(क) से 8(1)(ञ) के अंतर्गत विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत सूचना के प्रकटीकरण के दायित्व को निलंबित करती है। हालाँकि, धारा 8(2) के रूप में एक सर्वोपरि खंड मौजूद है जो व्यापक तौर पर लोक हित में धारा 8(1) के अंतर्गत छूट प्राप्त जानकारी के प्रकटीकरण की अनुमति देता है। उक्त धारा का प्रासंगिक भाग निम्नानुसार है:

"8(2) शासकीय गुप्त बात अधिनियम, 1923 (1923 का 19) में, उपधारा (1) के अनुसार अनुज्ञेय किसी छूट में किसी बात के होते हुए भी, किसी लोक प्राधिकारी को सूचना तक पहुँच अनुज्ञात की जा सकेगी, यदि सूचना के प्रकटन में लोकहित, संरक्षित हितों के नुकसान से अधिक है।"

29. यह सर्व-सम्मत तथ्य है कि लोक हित के लिए धारा 8 के अंतर्गत छूट प्राप्त ऐसी जानकारी के प्रकटीकरण में यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रकटीकरण में निहित लोक हित किसी सार्वजनिक प्राधिकरण या सार्वजनिक पदाधिकारी के संरक्षित हितों को होने वाले नुकसान से अधिक होना चाहिए, और इसलिए, न्यायालय को यह सुनिश्चित करना होगा कि किसी नागरिक के सूचना के अधिकार और विभिन्न राज्य पदाधिकारियों के बीच उचित संतुलन स्थापित करते हुए सूचना का प्रकटीकरण (यदि आवश्यक हो) किया जाए।

30. आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8 (2) में यह प्रावधान है कि यदि ऐसी जानकारी जिसे प्रदान करने से छूट दी गई है, वह व्यक्तियों और सार्वजनिक प्राधिकरणों के निजी निर्णय लेने के साथ-साथ किसी व्यक्ति के जीवनाधार को पोषित करने और सार्वजनिक प्राधिकरणों की ओर से जवाबदेही को सशक्त बनाने का प्रभाव डालती है और यह सुशासन को सशक्त बनाती है जिससे एक स्वस्थ लोकतंत्र का विकास होता है, और आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(2) के अंतर्गत भी इसका प्रावधान किया जा सकता है।

31. हालाँकि, आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(2) को केवल तभी लागू किया जा सकता है जब उसमें मौजूद शर्तें पूरी हों, अर्थात् यदि प्रकटीकरण में लोक हित संरक्षित हित को होने वाले नुकसान पर अभिभावी है। केवल यह कह देना कि सूचना को प्रकट करना लोक हित में है, पर्याप्त नहीं होगा जब तक कि कोई ठोस कारण न बताए जाएँ कि जिस सूचना को आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1) के अंतर्गत प्रदान करने से छूट प्राप्त है उसे क्यों प्रदान किया जाना चाहिए और इसमें लोक हित कैसे संरक्षित हित को होने वाले नुकसान पर अभिभावी होगा।

32. याचिकाकर्ता यह प्रदर्शित करने में सक्षम नहीं है कि आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(2) के उपबंधों का अवलंब लेने के लिए किस लोक हित को शामिल किया जाएगा। किसी भी लोक हित के अभाव में, प्रत्यर्थी द्वारा माँगी गई जानकारी, जिसे आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(1) के अंतर्गत छूट प्राप्त है, यह न्यायालय आर.टी.आई. अधिनियम की धारा 8(2) के उपबंधों को लागू करने के लिए इच्छुक नहीं है।

33. परिणामस्वरूप, रिट याचिका सफल होती है और दिनांक 05.12.2011 के आदेश को अपास्त किया जाता है।

34. रिट याचिका का निपटान लंबित आवेदनों, यदि कोई हो, के साथ किया जाता है।

न्या., सुब्रमण्यम प्रसाद

20 दिसंबर, 2023/*टी*

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*